इकाई 17 औपनिवेशिक इतिहास लेखन*

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 औपनिवेशिक इतिहास लेखन की प्रमुख अवधारणाएँ

17.3 कुछ महत्वपूर्ण औपनिवेशिक इतिहासकार

17.3.1 जेम्स मिल

17.3.2 माउंटस्टुअर्ट एल्फ़िन्स्टन

17.3.3 इलियट और डाउसन

17.3.4 विंसेंट स्मिथ

17.4 सारांश

17.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

17.6 संदर्भ ग्रंथ

17.7 शैक्षणिक वीडियो

17.0 उद्देश्य

इस इकाई का सरोकार औपनिवेशिक काल में औपनिवेशिक प्रशासकों तथा विद्वानों द्वारा लिखे गए इतिहास से है। यह आपको इतिहास के संबंध में उनके विचारों में समानताओं तथा भिन्नताओं से परिचित कराएगी। इस इकाई के अध्ययन के बाद आपः

- औपनिवेशिक इतिहास लेखन के इतिहास तथा आधारभूत विचारों के विषय में सीख पाएँगे,
- विभिन्न औपनिवेशिक इतिहासकारों के बीच तुलना करने में सक्षम होंगे, और
- इन इतिहासकारों के विचारों को पहचान पाएँगे कि भारत में ब्रिटिश शासन की प्रगति के साथ वे किस तरह विकसित हुए।

17.1 प्रस्तावना

औपनिवेशिक इतिहास का लेखन इतिहासलेखन की ऐसी धारा थी जो मुख्यतः उन प्रशासक-विद्वानों द्वारा विकासित हुई थी जो ब्रिटिश औपनिवेशिक हुकूमत की भारत में निरंतरता पर विचार करते हुए भारत को ऐतिहासिक रूप से समझना तथा वर्णित करना चाहते थे। इस प्रकार, भारत के विषय में ज्ञान प्राप्त करना, इस ज्ञान को इतिहास के स्वरूपों में ढालना और उपनिवेश (colony) के साथ विषमता भरे ब्रिटिश संबंधों को जारी रखने की आकांक्षा ही औपनिवेशिक इतिहासकारों के प्रयासों में निहित थी। इस इकाई में हम औपनिवेशिक इतिहासलेखन के महत्वपूर्ण सूत्रीकरणों तथा जिन तरीकों से ये विचार औपनिवेशिक इतिहासकारों के लेखन में प्रतिबिंबित हुए उनको समझने का प्रयास करेंगे।

17.2 औपनिवेशिक इतिहास लेखन की प्रमुख अवधारणाएँ

औपनिवेशिक इतिहासलेखन समरूप या एकरूप नहीं था क्योंकि यह 18वीं शताब्दी के मध्य से 200

* प्रो. शशि भूषण उपाध्याय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

सालों तक के काल में विकसित होता रहा था। औपनिवेशिक इतिहासलेखन स्वयं में विभिन्न प्रकार की प्रवृत्तियों को समाहित किए हुए है जो कभी-कभी एक दूसरे का विरोध भी करती हैं। औपनिवेशिक इतिहासलेखन के अंतर्गत मूलभूत रूप से तीन प्रकार की प्रवृत्तियाँ थीं: प्राच्यवादी, इंजीलवादी (Evangelicalist) और आंग्लवादी (Anglicist)। कभी-कभी कुछ इतिहासकारों में ये तीनों प्रवृत्तियाँ आपस में घुल-मिल गई हैं।

अठारहवीं शताब्दी से ही यूरोप के प्रतिमानों पर भारत के इतिहास को लिखने के प्रयास हुए हैं। इस काल में विभिन्न यूरोपीय देशों में प्रबोधन (Enlightenment) अपनी संपूर्ण शक्ति के साथ प्रभाव में था। प्रबोधन के विचारक, विशेष रूप से वोल्टेयर/वाल्तेयर (Voltaire) और डिडरोट/दिदरों (Diderot), विभिन्न देशों में यूरोपीय उपनिवेशीकरण में निहित दुर्व्यवहारों के प्रति आलोचक रुख रखते थे और वे एशियाई सभ्यता के कई पहलुओं की प्रशंसा भी करते थे। भारत के संदर्भ में प्रबोधन का परिणाम उस विचारधारा में निकला जिसे 'प्राच्यवाद' (Orientalism) कहते हैं। इसमें भारतीय सभ्यता की प्रशंसा और भारतीय दृष्टिकोणें तथा ज्ञान-तंत्रों को समझने का प्रयास भी शामिल था। विलियम जोंस, हेनरी कोलब्रुक, चार्ल्स विल्किंस, एच. एच. विल्सन और जेम्स प्रिंसेप प्रमुख प्राच्यवादियों में शामिल थे जिन्होंने औपनिवेशिक काल में भारतीय इतिहास की आधारशिला रखी थी। उनके लेख मुख्यतः प्राचीन भारत के इतिहास और संस्कृति पर केंद्रित हैं और अक्सर उन्होंने भारतीय इतिहास के मध्यकाल को यूरोपीय मध्यकाल की तरह अंधकार के युग के रूप में चित्रित किया।

इंजीलवादी प्रवृत्ति व झुकाव तीक्ष्णता के साथ संपूर्ण भारतीय परम्परा के प्रति गंभीर रूप से आलोचक रवैया रखते थे जिसे यह ईसाई धर्म के धार्मिक दृष्टिकोण से देखती थी। इसके प्रतिपादकों का लक्ष्य ब्रिटिश काल से पूर्व की सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति और सभ्यता को नीचा दिखाना था ताकि धर्मांतरण को सुगम बनाया जा सके। चार्ल्स ग्रांट और विलियम वार्ड इंजीलवादी इतिहासकारों में सबसे महत्वपूर्ण थे।

आंग्लवादी प्रवृत्ति का जन्म भी प्रबोधन से हुआ था और यह धर्मनिरपेक्ष स्वरूप की थी किंतु इसने भारत को सभ्यता के पैमाने पर बहुत निचला स्थान दिया था और औपनिवेशिक सरकार के माध्यम से यह प्रशासनिक, शैक्षिक और आर्थिक सुधारों को शुरू करना चाहती थी। यह आधुनिक पश्चिमी सभ्यता को प्रत्येक आयाम में असीमित रूप से सर्वश्रेष्ठ मानती थी। जेम्स मिल इस प्रवृत्ति के सबसे प्रमुख प्रतिनिधि थे।

कुछ ऐसे इतिहासकार भी थे जिनमें विभिन्न प्रकार की विचारधाराओं के प्रवाह से जन्मी प्रवृत्तियों का मिश्रण था। वे भारतीय सभ्यता के प्रशंसक और आलोचक, दोनों, थे। उनका झुकाव बिना पक्ष लिए ऐतिहासिक आख्यान पर ध्यान केंद्रित करने की ओर था। माउंटस्टुअर्ट एल्फ़िन्स्टन और विंसेंट स्मिथ जैसे इतिहासकार इनमें शामिल थे।

यद्यपि ये प्रवृत्तियाँ एक दूसरे से भिन्न हैं, ये आपस में कुछ समान विशेषताओं को साझा करती हैं जो मिलकर औपनिवेशिक इतिहास लेखन का निर्माण करती हैं। इनको निम्नलिखित प्रकार से सारबद्ध किया जा सकता है:

1) औपनिवेशिक इतिहास लेखन ने भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के औचित्य को बढ़ावा दिया, यद्यपि कुछ इतिहासकार कभी-कभी इसकी ज़्यादतियों के आलोचक थे। उन्होंने भारत में इसके लाभदायक प्रभाव के पक्ष में तर्क रखा और अंततः भारत में इसकी निरंतरता का समर्थन किया।

2) उनका विश्वास था कि समकालीन भारत सभ्यता के निचले पायदान पर था जिसे सुधारों की ज़रूरत थी और यह केवल प्रबोधन के विचार से अनुप्रेरित ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार द्वारा ही संभव था। उनका विचार था कि पश्चिमी विज्ञान और प्रौद्योगिकी भारतीयों को आधुनिक युग की ओर प्रेरित व उन्मुख करने में काम आएगी। इस प्रकार केवल ब्रिटिश विचारों और प्रशासन के हस्तक्षेप के माध्यम से भारत के पिछड़ेपन को सुधारा जा सकता था।

3) समकालीन पश्चिमी सभ्यता संपूर्ण रूप में अपने सभी पहलुओं में सर्वश्रेष्ठ थी और भारतीयों को अपनी स्थिति को बेहतर बनाने के लिए उनका अनुकरण करना चाहिए। आदिम स्वरूप से

वैज्ञानिक स्वरूप की ओर सभ्यता की इस रेखीय गति का यह विश्वास सामान्य था और आमतौर पर यह माना जाता था कि भारत जहाँ इस पैमाने पर निचले बिंदु पर मौजूद था वहीं आधुनिक पश्चिमी सभ्यता प्रगति के सर्वोच्च बिंदु पर स्थित थी।

4) सामान्यतः यह माना जाता था कि भारत का कोई इतिहास नहीं है। जो भी यहाँ इतिहास के रूप में नज़र आता था वह वास्तव में कथाओं, किस्सों और मिथकों का एक संग्रह मात्र था। इस प्रकार यह औपनिवेशिक इतिहास लेखन की परियोजना थी कि भारत को एक इतिहास उपलब्ध कराया जाए।

5) औपनिवेशिक इतिहास लेखन के अनुसार भारत एक गतिहीन ग्राम-समाजों का ठहराव भरा देश था जिसकी जनसंख्या गतिहीन थी और इसे प्रगति के पथ पर केवल औपनिवेशिक सत्ता के प्रयासों से ही आगे ले जाया जा सकता था।

6) औपनिवेशिक इतिहासकारों का यह विश्वास था कि भारतीय समाज हमेशा से जातियों, समुदायों और पंथों में विभाजित रहा है। इसके अतिरिक्त कुछ बड़े साम्राज्यों के काल को छोड़कर भारत में कभी भी राजनीतिक एकता नहीं रही है। यह केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन था जिसने इसे एकता का आभास करवाया था। यद्यपि इसे केवल ऊपर से ही आरोपित किया जा सका था और जैसे ही औपनिवेशिक शासन यहाँ से हटेगा भारतीय समाज अराजकता और परस्पर युद्ध में डूब जाएगा।

7) औपनिवेशिक इतिहास लेखन में प्राच्यवादी निरंकुशता का विचार आगे बढ़ाया गया जिसका तात्पर्य यह था कि सभी भारतीय राजा और शासक सर्वाधिकारवादी निरंकुश शासक थे। केवल औपनिवेशिक सरकार ही भारत को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में लोकतांत्रिक संस्थाओं से परिचित कराते हुए लोकतंत्र के रास्ते पर ले जा सकती थी।

8) बहुत से औपनिवेशिक इतिहासकारों ने बढ़ते हुए राष्ट्रवादी आंदोलन के प्रति कड़ा आलोचनात्मक रुख दिखाया था जिसे वे कुछ अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों के स्वार्थपूर्ण कारनामों से अधिक कुछ नहीं मानते थे। उनका विश्वास था कि राष्ट्रवादी आंदोलन किसी भी तरह भारत की भलाई में परिणत नहीं होगा बल्कि भारत को राजनीतिक अराजकता और संकट की ओर ले जाएगा। उनका यह भी मानना था कि भारतीय अंग्रेजों के उदारतापूर्ण शासन के प्रति विरोध करते हुए कृतघ्नता प्रकट कर रहे थे। यद्यपि कुछ औपनिवेशिक इतिहासकार ऐसे थे जो बढ़ते हुए राष्ट्रवाद के प्रति सहानुभूति रखते थे वहीं कुछ अन्य मात्र शत्रुतापूर्ण रुख रखते थे।

17.3 कुछ महत्वपूर्ण औपनिवेशिक इतिहासकार

यद्यपि औपनिवेशिक इतिहासकारों की संख्या बहुत है, हम यहाँ केवल चार महत्वपूर्ण औपनिवेशिक इतिहासकारों को इस इकाई में चर्चा हेतु चुनेंगे। इन्हें औपनिवेशिक इतिहासलेखन के विशेष रूप से और भारतीय इतिहासलेखन के सामान्य रूप से विकास में इनके सापेक्षिक महत्व के कारण चुना गया है। इनमें से दो इतिहासकारों का भारतीय सभ्यता के प्रति नकारात्मक रवैया था। यह हैं जेम्स मिल और हेनरी इलियट (जॉन डाउसन वस्तुतः इलियट की उन रचनाओं के संपादक थे जो उनकी मृत्यु के बाद प्रकाशित हुई थीं)। दूसरी ओर, दो अन्य इतिहासकार माउंटस्टुअर्ट एल्फ़िन्स्टन और विंसेंट स्मिथ सामान्यतः भारतीय सभ्यता के प्रति कम आलोचक या प्रशंसात्मक रवैया रखते थे।

17.3.1 जेम्स मिल

यद्यपि रॉबर्ट ओर्मे (Orme) भारत के पहले आधिकारिक औपनिवेशिक इतिहासकार थे, जेम्स मिल (1773-1836) को औपनिवेशिक इतिहास लेखन के संस्थापकों में सबसे अग्रणी माना जाता है। उनकी *हिस्ट्री ऑफ़ ब्रिटिश इंडिया* (जिसे 1806 से 1818 के बीच लिखा गया था और जो छः भागों में प्रकाशित हुई थी) 19वीं शताब्दी के दौरान भारतीय इतिहास की सबसे प्रभावपूर्ण किताब थी। यद्यपि इसको 'ब्रिटिश भारत के इतिहास' का शीर्षक दिया गया था इसके पहले तीन भागों में प्राचीन और मध्यकालीन भारत पर विचार किया गया था और केवल अगले तीन भागों का संबंध भारत में ब्रिटिश शासन से है। भारत में प्राच्यवादी लेखन और विशेषकर विलियम जोंस के लेखन के विरोध में लिखी

गई यह किताब 'भारतीय सभ्यता के प्रति दीर्घकालिक और सबसे गहरे पूर्वाग्रहों का स्रोत' थी (उपाध्याय 2016: 436)। मिल कभी भारत नहीं आए थे, किसी भी भारतीय भाषा से परिचित नहीं थे, उनकी कृति पूर्णतः कई वर्षों से भारत के संबंध में लिखी और संकलित की गई सामग्रियों के आंशिक अध्ययन पर आधारित थी। उन्होंने भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा संग्रहित विशाल सामग्री का अधिक इस्तेमाल नहीं किया और मुख्यतः एक पक्षपात भरे इतिहास का लेखन किया। इस प्रकार के इतिहास में अगर किसी विशेष तर्क के पक्ष में किसी देश के संबंध में कोई तथ्य नहीं मिलते हैं तो दूसरे देशों के संबंध में मौजूद तथ्यों को इन अंतरालों/रिक्तियों को भरने के उपयोग में लाया जाता है। उन्होंने भारतीय सभ्यता, विशेषकर हिंदू सभ्यता, को नीचा दिखाने के लिए इसी तरह काम किया था। फिर भी उनकी पुस्तक को भारत आने वाले युवा सिविल सेवकों/अधिकारियों के लिए पाठ्यपुस्तक के रूप में स्वीकार किया गया था। मिल 19वीं शताब्दी के शुरुआती दशकों में ब्रिटेन में उदित हो रहे साम्राज्यवादी मध्यवर्ग की मानसिकता का प्रतिनिधित्व करते थे और उनकी पुस्तक की सफलता के कारणों की इस रूप में व्याख्या की जा सकती है।

मिल ने इतिहास की परिकल्पना 'सभ्यता की एक प्रक्रिया' के रूप में की थी। इसके अतिरिक्त जहाँ विलियम जोंस ने ब्रिटिश और भारतीय सभ्यताओं और संस्कृतियों के बीच घनिष्ठता को खोजने का प्रयास किया, मिल ने 'समकालीन भारतीय समाज और प्रगतिवादी पश्चिम के बीच क्रमिक रूप से विकसित हुए अंतराल पर विशेष रूप से बल दिया है' (गॉटलोब 2003: 97)। मिल ने भारतीय इतिहास को तीन विभागों में बाँटा थाः हिंदू, मुस्लिम और ब्रिटिश। उसका विश्वास था कि ब्रिटिशों के भारत में आगमन से पूर्व के सभी भारतीय शासक निरंकुश और सर्वसत्तावादी थे। सभ्यता की उपलब्धियों के सभी पैमानों पर मिल ने भारत को विभिन्न देशों के बीच निचले स्थान पर रखा था जिनमें यूरोपीय देशों का स्थान सर्वोच्च था। मिल ने प्राच्यवादियों के इस विचार को पूर्ण तरह नकार दिया कि प्राचीन भारतीय सभ्यता अपने समय की सबसे सर्वश्रेष्ठ सभ्यताओं में से थी। इसके बजाय मिल ने दृढ़तापूर्वक कहा कि अपनी अपमानजनक और विभेदकारी जातीय प्रणाली भारतीय समाज की एक 'घृणित अवस्था' थी। उसके अनुसार निरंकुश राजाओं और अंधविश्वासी पुरोहितों ने हिंदुओं को 'मानव जाति का सर्वाधिक दासता-पूर्ण भाग' बना दिया था।

जेम्स मिल हिंदू धर्म को आस्था की एक ऐसी असंगत और अतार्किक व्यवस्था मानते थे जिसमें संपूर्ण रूप से ब्राह्मणों का प्रभुत्व था और जिसे 'बेमिसाल अस्पष्टता' की भाषा में लिखा गया था। उसके अनुसार प्राचीन हिंदू धार्मिक ग्रंथ – *वेद* – 'पूर्ण रूप से अस्पष्ट और अज्ञानता-भरे, असंगत, अनिश्चित क्रम लिए और भ्रम से भरे हुए थे'। वे 'विचारों से हीन विमर्शों के उदाहरणों में सबसे अधिक शब्दाडंबर. युक्त स्वरूप का निर्माण करते हैं। जिस संबंध में ज्ञान न हो उसके प्रति अनुमान लगाने की एक असभ्य दिमाग की ऐसी भयहीन प्रवृत्ति ने कभी स्वयं को इससे अधिक ऊटपटांग और अर्थहीन स्वरूप में अभिव्यक्त नहीं किया है'। हिंदू धर्म में अभिव्यक्त विचार 'अधिकतम अंश तक अमूर्त, निम्नतर और पतनशील हैं'। वह लिखता हैः

> किसी भी जन, चाहे वे कितने ही असभ्य और अनजान रहे हों, जिन्होंने इतनी उन्नति की हो कि वे अपने विचारों के संस्मरण हमारे पास लिखित रूप में छोड़ गए हों, ने कभी भी संसार का इतना घटिया और अशोभनीय चित्र प्रस्तुत नहीं किया है जितना कि हिंदुओं के लेखन में प्रस्तुत हुआ है। इनकी अवधारणा में किसी भी प्रकार की संगति, बुद्धिमत्ता या सुंदरता नज़र नहीं आती है। सभी कुछ अव्यवस्थित, सनक से भरा, वासनामयी, लड़ाई, त्रासद, कौतुक, हिंसा और विकृति ही है।
>
> **जेम्स मिल, *हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया***

साहित्य के क्षेत्र में भी, जिसमें प्राचीन भारतीयों को दक्ष समझा जाता था, मिल उनकी आलोचना करता है। उसके अनुसार *महाभारत* और *रामायण*ः

> न केवल शब्द-आडंबर से भरे और अप्राकृतिक हैं ... बल्कि सरलता में कमतर, अधिक असंतुलित और इनमें ऐसा बहुत कम ही है जो किसी प्रकार का लगाव पैदा करे, सहानुभूति जगाए या प्रशासन, प्रतिशोध और आतंक में दक्षता का प्रदर्शन करे ... ये बहुत अधिक विस्तृत और रसहीन हैं। ये अक्सर अपने लंबे उद्धरणों के माध्यम से उस अंश तक तुच्छ और बचकाना प्रतीत होते हैं कि केवल यूरोपीय काव्य से परिचय रखने वाला मुश्किल से ही इनकी उस शैली को ग्रहण कर पाएगा जिनमें इनकी रचना की गई है ... 'ये त्रुटियों, अतिशयोक्ति, रूपकों, दुर्बोधता, पुनरुक्ति, दोहराव भरे शब्दाडंबर, भ्रम, असंगति का प्रदर्शन करते हैं ...
>
> **एस. सी. मित्तल में उद्धृत, 1995, संस्करण 1: 24.25**

इस प्रकार मिल ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति को नीचा दिखाने के लिए एक अतिवादी सुर अपनाया था। यद्यपि भारतीय सभ्यता के विषय में उसके विचारों को अन्य औपनिवेशिक इतिहासकारों ने हमेशा ही स्वीकार नहीं किया था किंतु वह सामान्य ब्रिटिश पाठकों के बीच अत्यधिक लोकप्रिय था।

बोध प्रश्न-1

1) औपनिवेशिक इतिहासलेखन के महत्वपूर्ण विचारों की विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

2) किस प्रकार आप समझते हैं कि जेम्स मिल एक औपनिवेशिक इतिहासकार था?

.....

.....

.....

17.3.2 माउंटस्टुअर्ट एल्फ़िन्स्टन

जहाँ जेम्स मिल कभी भारत नहीं आए थे, एल्फ़िन्स्टन (1779-1859) एक प्रशासक और विद्वान के रूप में लंबे समय तक भारत में रहे थे। भारतीय समाज, साहित्य और भाषाओं के साथ उनका परिचय भारत के संबंध में उनकी बेहतर समझ में परिणत हुआ। वह मिल के इतिहास की सनक और भारतीयों और भारतीय सभ्यता के उसके बहुत ही पक्षपातपूर्ण विवरण के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि भी रखते थे। उन्होंने मिल के संकीर्ण उपयोगितावादी ढाँचे को भी स्वीकार नहीं किया। उनका विश्वास था कि यद्यपि मिल का इतिहास ब्रिटेन में लोकप्रिय रहा हो इसे भारत में उसी प्रकार ग्रहण नहीं किया गया है। एल्फ़िन्स्टन मिल के लेखन के बड़े आलोचक थे और इसे भारतीयों के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रस्त मानते थे। वह लिखते हैं:

> मुझे लगता है कि मिल अपने इतिहास के अंग्रेजों वाले भाग में अधिक साफ़गोई रखते हैं जितना मैं उनके देशीय इतिहास वाले हिस्से में पाता हूँ। उनकी अपेक्षा उनकी कठोरता तथ्यों को नया रंग देने या उनके प्रति पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाने के बजाय उनकी तिरस्कारपूर्ण और उपहासात्मक, व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति में अधिक नज़र आती है। मेरा यह मानना है कि वह अपनी कुछ बातों को लेकर ग़लतफ़हमी में थे और वे किसी परिणाम पर पहुँचने के बजाय विवादों को पैदा करने में अधिक व्यस्त प्रतीत होते हैं। **एस. सी. मित्तल में उद्धृत, 1995, संस्करण 1: 61**

एल्फ़िन्स्टन की *हिस्ट्री ऑफ़ हिंदू एंड मुहम्मडन इंडिया* (1841) और अधूरी रह गई कृति *ब्रिटिश पावर इन द ईस्ट* को भारत के प्रतिस्पर्धी विवरण के तौर पर लिखा गया था जो मिल के इतिहास से कई पहलुओं में भिन्नता रखती थी। वह भारतीय सांस्कृतिक उपलब्धियों के प्रति अधिक प्रशंसात्मक रवैया रखते थे। उनका विचार था कि पूर्वी देश सामान्य रूप से और भारत विशेष रूप से अपने प्राचीन अतीत में कई अन्य देशों की तुलना में, जिनमें यूरोप के देश भी शामिल हैं, उच्च स्तर की सभ्यता को प्राप्त कर चुके थे। उन्होंने साहित्य, दर्शन, गणित, धर्म तथा क़ानून की विभिन्न शाखाओं में प्राचीन भारत की उपलब्धियों की प्रशंसा की। उनका विश्वास था कि 'एक समय हिंदू नैतिक तथा बौद्धिक स्तर पर उच्च स्तर पर थे, अपनी अभी की अवस्था की तुलना में; और अभी अपनी वर्तमान पतन की अवस्था में भी वे यूरोप के कई लोगों के समान स्तर पर खड़े होते थे' (उपाध्याय में उद्धृत, 2016: 440)।

उनके अनुसार प्राचीन हिंदुओं का ज्ञान उच्च अवस्था का था और वे पहले से ही उस प्रकाश को धारण करते थे जो एथेंस के सबसे अच्छे काल में भी सर्वश्रेष्ठ बौद्धिकों के पास था, किंतु मंद स्वरूप में। वह प्राचीन विश्व की प्रतिस्पर्धी सभ्यताओं के बीच कई बौद्धिक उपलब्धियों के कारण हिंदू सभ्यता को उच्चतर मानते थे। उनका मत तथा विश्वास था कि कई क्षेत्रों में 'प्राचीन भारतीय शिष्यों/सीखने वालों के बजाय गुरुओं/सिखाने वालों का दर्जा' रखते थे। वह लिखते हैं:

> अपने प्रतिस्पर्धियों के मुक़ाबले विज्ञान को श्रेष्ठता के स्तर पर पहुँचाने में हिंदुओं की सर्वश्रेष्ठता पर कोई संदेह नहीं है। न केवल आर्यभट्ट डायोफैंटस (Diophantus) के मुक़ाबले श्रेष्ठ था ... बल्कि

> उसके और उसके बाद आने वालों के बीजगणित के सिद्धांतों ने ही हमारे समय में विद्यमान रहे बीजगणितज्ञों की खोजों को प्रभावित किया है।
>
> **एस. सी. मित्तल में उद्धृत, 1995, संस्करण 1: 65**

उनके अनुसार प्राचीन भारतीय इतने उन्नत थे कि वे 'लगभग हमारे समय के ही प्रतीत होते हैं' (एस. सी. मित्तल में उद्धृत, 1995, संस्करण 1: 64)। उनका यह भी नहीं मानना था कि *जाति* व्यवस्था भारत के सांस्कृतिक और बौद्धिक विकास के लिए एक विभाजनकारी और बाधक कारक था। उन्होंने लिखा है कि '*जाति* की संस्था के होने पर भी ऐसा कोई देश नहीं है जहाँ मनुष्य निम्नतम स्तर से इतनी आसानी से उठकर उच्चतर स्तर को पा लेता था। अवध का पहला नवाब (अब राजा) एक तुच्छ व्यापारी था; पहला पेशवा एक ग्रामीण लेखपाल था; होलकरों के पूर्वज बकरियाँ पालते थे और सिंधियाओं के पूर्वज दास थे' (उपाध्याय में उद्धृत, 2016: 440)।

अपनी *हिस्ट्री* के अंतिम भाग में उन्होंने भारत में मुस्लिम राजाओं के शासन पर विचार किया है। वे इस काल का भी एक संतुलित नज़रिया पेश करते हैं। उन्होंने अपने तर्क को अकबर के शासन की तुलना औरंगज़ेब के शासन से करते हुए रखा था और अकबर की सहिष्णु नीतियों, जिनसे उसे अपनी हिंदू प्रजा की निष्ठा प्राप्त हुई तथा जिसका परिणाम देश की एकता में भी देखने को मिला था, की प्रशंसा की। इसके विपरीत उन्होंने औरंगज़ेब जिसने अकबर की सहिष्णु और समावेशी नीतियों को उलट कर रख दिया था, जिसका परिणाम हिंदुओं के अलगाव में निकला था, के शासन की आलोचना की। औरंगज़ेब की धर्मांध नीतियों ने मराठाओं, सिखों, जाटों तथा अन्य के विद्रोहों को जन्म दिया था।

लेकिन, भारतीय शासकों की प्रशंसा के बावजूद एल्फ़िन्स्टन अन्य औपनिवेशिक इतिहासकारों की भाँति यह मानते थे कि उनके समय में पश्चिमी सभ्यता की सर्वश्रेष्ठता निर्विवादित थी। उन्होंने कभी भी औपनिवेशिक शासन की वैधता और भारत के लिए उसके लाभदायक प्रभावों पर कोई संदेह नहीं किया।

17.3.3 इलियट और डाउसन

हेनरी इलियट (1808-1853) और जॉन डाउसन (1820-1881) को ऐसे औपनिवेशिक इतिहासकारों के रूप में जाना जाता है जिन्होंने हिंद-फ़ारसी (Indo-Persian) इतिहासों का व्यापक संकलन तैयार किया। इलियट का भारत के संबंध में प्रारंभिक ऐतिहासिक कार्य *बिब्लियोग्राफ़िकल इंडेक्स टू हिस्टौरियंस ऑफ़ मोहम्मडन इंडिया* (1849) था। इसके बाद सिंध में अरबों पर एक लघु पुस्तक (1853) सामने आई। उनका मुख्य लेखन आठ भागों में *हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया एज़ टोल्ड बाय इट्स ओन हिस्टौरियंस* उनकी मृत्यु के बाद 1866 से 1878 के बीच प्रकाशित हुआ जिसे जॉन डाउसन द्वारा संपादित और अंतिम रूप प्रदान किया गया था। कई दशकों तक भारत के मध्यकालीन इतिहासकारों के लेखों का यह चयनित संकलन मध्यकालीन इतिहासकारों द्वारा महत्वपूर्ण स्रोत-सामग्री के रूप में इस्तेमाल किया जाता रहा। किंतु कुछ इतिहासकारों द्वारा इनकी आलोचना भी की गई क्योंकि इन औपनिवेशिक इतिहासकारों ने मध्यकालीन भारतीय राजव्यवस्था और समाज के वास्तविक चित्र को विकृत बना दिया था।

हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया 'मध्यकालीन भारतीय इतिहासकारों के लेखों की एक सामान्य प्रस्तुति नहीं थी बल्कि व्यापक यूरोपीय अकादमिक परम्परा के भीतर निहित एक पूर्वाग्रहग्रस्त चयन की प्रक्रिया थी' (उपाध्याय, 2016: 443)। इलियट का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य मध्यकालीन भारत के कृषि इतिहास, ग्रामीण सामाजिक वर्गों तथा राजस्व संग्रह की पद्धतियों के संबंध में जानकारी उपलब्ध कराना था क्योंकि उनके विषय में 19वीं शताब्दी के मध्य में बहुत अधिक जानकारी नहीं थी। किंतु उनका उद्देश्य इससे कुछ व्यापक था। उनकी आकांक्षा थी कि उनका संकलन 'ज्ञान के ऐसे उपयोगी भंडारों का सृजन करे जो व्यापक अकादमीय उद्देश्यों की पूर्ति करे, जिससे आने वाले समय के विद्वान अधिक बेहतर और ठोस चित्र का निर्माण करने हेतु अपने परिश्रम और अध्यवसाय से ऐसी सामग्री निकाल सकें'(वाही में उद्धृत, 1990: 71)। भारत के मुस्लिम इतिहास के पुनर्निर्माण में यह दिलचस्पी इलियट द्वारा कंपनी को अवध के नवाब के पुस्तकालय में मौजूद किताबों और पांडुलिपियों को वित्तीय सीमाओं के बावजूद संरक्षित करने के लिए मनाने में प्रकट होती है। उनका संपर्क एच. एच. विल्सन जैसे प्राच्यवादियों के साथ भी था और उनके बीच पत्राचार भी हुआ।

किंतु मुस्लिम शासन के गंभीर नकारात्मक चित्रण में औपनिवेशिक पक्षपात स्पष्ट नज़र आता है। भारतीय-मुस्लिम इतिहासलेखन को भी बख्शा नहीं गया था। इलियट ने यह घोषणा की कि ऐसा चित्रण साधारण इतिवृत्तों से बेहतर नहीं हैः

> उन्हें इतिहास की शैली के रूप में प्रस्तुत करना लगभग उन्हें ग़लत नाम देना होगा। वे मुश्किल से ही साधारण इतिवृत्तों से ऊँची श्रेणी का होने का दावा कर सकते हैं। वे अपने अधिकांश हिस्से में घटनाओं के शुष्क वर्णन से अधिक कुछ भी नहीं है जिन्हें कालक्रम के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। कभी भी उन्हें उनके संबंधों के अनुरूप दार्शनिक रूप से श्रेणीबद्ध नहीं किया गया है। बिना कारणों या परिणामों पर चिंतन किए इनमें ऐसा कोई संकेत या चिंतन नहीं है जो बचकाना या निम्न कोटि का न हो; और न ही कोई दृष्टि है जो उत्तरोत्तर षड्यंत्रों, विद्रोहों, चालबाज़ियों, हत्याओं, भातृहत्याओं के नीरस सिलसिले को तोड़े ... जहाँ परी-कथाओं तथा क़िस्सों को इतिहास के सामान्य नाम से प्रस्तुत किया गया हो हम ऐसे इतिहासकारों के चरित्र, उद्यमों, मंतव्यों तथा कृत्यों के बारे में जानने के संबंध में बहुत आशा नहीं रख सकते हैं
>
> **उपाध्याय में उद्धृत, 2016: 414**

भले ही 'हमें ऐसे दृश्यों पर विचार से कुछ राहत मिलती है, जब हम प्रारंभिक मुग़ल बादशाहों के विवरणों तक पहुँचते हैं हमें इन दस्तावेज़ों में राज्य की भव्यता और दरबार के ऐश्वर्यपूर्ण समारोहों, साम्राज्य के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को प्रदान की गई उपाधियों, जवाहरातों, तलवारों, नगाड़ों, झंडों, हाथियों और घोड़ों के रूप में कुछ ध्यान खींचने वाली सामग्री ही मिलती है'। इलियट लिखते हैंः

> यदि डायोनिसियस (Dionysius) की कृत्रिम परिभाषा को उचित माना जाए कि 'इतिहास का मतलब उदाहरणों के माध्यम से दर्शन की शिक्षा देना है' तो ऐसा कोई भी देशी-भारतीय इतिहासकार नहीं है ... और जो घटिया क़िस्म के हैं, जिनकी कोई कमी नहीं है, यद्यपि वर्णनकर्ता के आनुवांशिक, कुलीन तथा पंथीय पूर्वाग्रहों के कारण उनमें भी मूलगामी सत्य दुर्बोध ही बना रहता है लेकिन दर्शन, जो अतीत के सबक और अनुभव के माध्यम से हमारे लाभ हेतु निष्कर्षों को प्रतिपादित करता है, राजनीतिक विवादों के परिणामों और प्रभावों की जानकारी देता है और भविष्य के लिए उचित परामर्श प्रदान करता है, का कोई चिह्न या संकेत खोजने का प्रयास करना व्यर्थ ही है। घरेलू/आंतरिक इतिहास का भी हमारे इन भारतीय विवरणकारों में बिल्कुल भी कुछ नहीं है ... उनके द्वारा समाज के संबंध में कभी भी विचार नहीं किया गया, न ही इसकी परंपरागत उपयोगिताओं या नज़र आने वाले विशेषाधिकारों पर; न इसके निर्माणकारी या लोकप्रिय संस्थानों पर; न इसके निजी तौर-तरीक़ों या परस्पर अंतःक्रियाओं की आदतों पर। वाणिज्य, कृषि, आंतरिक शासन और स्थानीय न्याय-विधान का भी समान रूप से अभाव है।

अतएव, इलियट का कथन है कि इन मध्यकालीन ऐतिहासिक कृतियों को 'इतिहास के कुछ सबसे आवश्यक तत्वों से रहित कहा जा सकता है। इन मध्यकालीन भारतीय इतिहासों में ऐसा बहुत कम है जो हमें चमकती हुई सतह के भीतर झाँकने में सक्षम बनाए ... और एक निरंकुश सरकार के व्यवहारिक कार्य-संचालन और इसकी कठोर तथा रक्तपिपासु विधियों का राष्ट्र की महान् संरचना/काया पर इन घातक प्रभावों और कृत्यों के प्रभाव का अवलोकन करने का अवसर दें' (*हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया* में इलियट का आमुख-लेख, 1867, संस्करण 1, xix-xx)।

उनके इतिहास में मुस्लिम शासन का वर्णन बहुत ही नकारात्मक तरीके से किया गया है। उनके अनुसार मुस्लिम शासन सामान्य रूप से भारतीय जनता और विशेष रूप से हिंदुओं के लिए त्रासद था। मुस्लिम शासक सामान्य रूप से तानाशाह और अत्याचारी थे जिन्होंने अपनी हिंदू प्रजा के कल्याण के विषय में कभी भी विचार नहीं किया। दमन, शोषण और धार्मिक स्वतंत्रता को नकारना एक सामान्य व्यवहार था। हिंदुओं पर हमले हुए, उनका नरसंहार हुआ, उन्हें गुलाम बनाया गया और उनका धर्मांतरण हुआ। उनके मंदिर और उपासना-स्थल लूट लिए गए तथा नष्ट कर दिए गए। उनकी महिलाओं का अपहरण हुआ, उन्हें दास बनाया गया और जबरदस्ती विवाह करने के लिए बाध्य किया गया। ऐसे अभिकथन इलियट के आमुख-लेख में प्रस्तुत किए गए हैं जो प्रथमतः 1849 में प्रकाशित हुआ था और बाद में 1867 में प्रकाशित प्रख्यात *हिस्ट्री* में इसे शामिल किया गया। स्पष्ट रूप से इसने द्विराष्ट्र के सिद्धांत का सर्वभाँति अनुसरण किया और ब्रिटिश शासन को मुस्लिमों के आतंक से हिंदुओं का उद्धार करने वाला बताया गया। इलियट और डाउसन ने मध्यकालीन भारत को पूर्णतः मुस्लिमों के साथ जोड़ते हुए स्पष्टता और तीक्षता के साथ हिंदुओं और मुस्लिमों के बीच भारत को विभाजित किया। उनके अनुसार यद्यपि मुस्लिम भारत के लिए विदेशी नहीं रह गए थे उनका शासन और उनकी विधियाँ तथा नीतियाँ अत्यधिक

सीमा तक मुस्लिमों के पक्ष में झुकी हुई थीं। हिंदू हमेशा शासित प्रजा बने रहे। संपूर्ण मध्यकाल में लोगों के लिए कोई स्वतंत्रता नहीं थी तथा कोई आर्थिक प्रगति दृष्टव्य नहीं हुई थी। इस प्रकारः

> ऐसे शासकों के अधीन हमें कोई आश्चर्य नहीं हो सकता कि न्याय का प्रवाह भ्रष्ट होता है; कि राज्य के राजस्वों को कभी भी बिना हिंसा और विद्रोह के बिना संग्रहित नहीं किया जाता है; कि गाँवों को जलाया जाता है और उनके निवासियों को नुक़सान पहुँचाया जाता है या उन्हें गुलामी हेतु विक्रय कर दिया जाता है; कि अधिकारीगण सुरक्षा उपलब्ध कराना तो दूर वे स्वयं ही प्रधान लुटेरे और हड़प लेने वाले हैं; कि लूट लिए गए प्रांतों की संपत्ति पर परजीवी और हिजड़े आनंद का भोग करते हैं; और कि गरीबों को शोषकों के दुष्कर्म के विरुद्ध कोई राहत नहीं मिलती है।

इससे उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि 'आमजन अवश्य ही बदहाली और निराशा के गहनतम बिंदु तक डूब चुके थे। हम कुछ दृश्य देखते हैं ... मोहम्मडनों के साथ विवाद के लिए हिंदुओं को मौत के घाट उतारे जाने के, धार्मिक जुलूसों, उपासना और प्रक्षालनों (ablutions) पर प्रतिबंध के, तथा अन्य और असहिष्णु कदमों के, मूर्तियों को खंडित करने के, मंदिरों को ध्वस्त करने के, बलपूर्वक किए गए धर्मांतरणों और विवाहों के, अपमानों और संपत्ति-हरण कर लिए जाने के, हत्याओं व नरसंहारों के, और उन आततायियों की विषयासक्ति और मदिरा के नशे में चूर रहने के। यह दिर्शाता है कि यह चित्र बहुत अधिक बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत नहीं किया गया है ...' (*हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया* में इलियट का 'आमुख-लेख,' 1867, संस्करण 1, xx-xxv)।

उनका तर्क था कि ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार ने भारत के लोगों, विशेष रूप से हिंदुओं के लिए, अपने 50 वर्षों में इतना अधिक किया है जितना कि मुस्लिम सरकारों ने 500 वर्षों में भी नहीं किया था। औपनिवेशिक सरकार ने सड़कें, नहरें बनवाईं और लोक कल्याण की बहुत सी योजनाओं को शुरू करवाया जो मुस्लिम शासकों में से सबसे श्रेष्ठ शासक के अधीन किए गए प्रशासनिक कार्यों से कहीं अधिक हैं। उनका विचार था कि भारत के लिए ब्रिटिश शासन श्रेष्ठतम है क्योंकि यह उदार है और भारत में भारतीयों की भलाई के लिए शासन करता है। उन्होंने तर्क दियाः

> जब हम एक तानाशाही के अत्याचारों और स्वेच्छाचारिता के ध्वंसकारी प्रभावों को देखते हैं हमें एक संतुलित संविधान के मूल्य का उचित तरीके से आकलन करना सीखना चाहिए। जब हम सिंहासन पर विवादित दावों से वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए होने वाले कष्टों को देखेंगे हम नियमबद्ध उत्तराधिकार के सिद्धांत को अधिक महत्व दे पाएँगे जो किसी भी चुनौती या विवाद का शिकार नहीं होता है। किसी भी अन्य देश में ये कष्ट भारत जितने गंभीर नहीं रहे हैं, किसी भी अन्य देश में इस तरह की घटनाएँ बारंबार नहीं हुई हैं और राजसिंहासन के इतने अधिक के दावेदार नहीं रहे होंगे ... हम पहले ही अपनी सत्ता के पचास सालों में लोगों के आवश्यक कल्याण के लिए बहुत कुछ कर चुके हैं और पूर्वगामी शासकों की अपेक्षा दस गुना हासिल कर पाने में सक्षम हुए ...
>
> ***हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया* में इलियट का 'आमुख-लेख,' 1867, संस्करण 1, xxv-xxvii**

17.3.4 विंसेंट स्मिथ

विंसेंट स्मिथ (1848-1920) को भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के अंतिम चरण का अत्यंत महत्वपूर्ण औपनिवेशिक इतिहासकार माना जाता है। उन्हें जेम्स मिल के बाद भारत के सर्वाधिक महत्वपूर्ण इतिहासकार के रूप में पहचाना जाता है। उनकी *अर्ली हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया* (1904) भारतीय इतिहास के संबंध में एक सफल पुस्तक रही है जिसके कई संस्करण प्रकाशित हुए हैं। उनकी और अधिक सारगर्भित ऑक्सफ़ोर्ड *हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया* (1919) को भी उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त है। इन दोनों ही कृतियों को भारतीय महाविद्यालयों में मानक पाठ्य-पुस्तकों के रूप में स्वीकार किया गया था। इसके अलावा उन्होंने *हिस्ट्री ऑफ़ फ़ाइन आर्ट्स इन इंडिया एंड सीलोन* (1911) तथा *इंडियन कॉन्स्टिट्यूशनल रिफॉर्म व्यूड इन द लाइट ऑफ़ हिस्ट्री* (1919) को भी प्रकाशित करवाया। उनकी महत्वपूर्ण उपलब्धि भारतीय इतिहास को राजनीतिक घटनाओं, वंशों और महान् शख्सियतों के चारों ओर व्यवस्थित एक ठोस कालानुक्रम में प्रस्तुत करना है। स्मिथ की किताबों ने उनके काल में मौजूद समस्त ज्ञान को आधिकारिक तरह से सारबद्ध रूप में प्रस्तुत किया। अतः उनके ऐतिहासिक ग्रंथ आने वाले कई दशकों तक अधिकांश भारतीय विश्वविद्यालयों में बेमिसाल पाठ्य-पुस्तकों के रूप में बने रहे।

विंसेंट स्मिथ ने इतिहास को सामान्यतः भारत के एक संतुलित और निष्पक्ष दृष्टिकोण के रूप में प्रस्तुत किया किया था। अपनी *ऑक्सफ़ोर्ड हिस्ट्री* में स्मिथ भारत में इतिहास लेखन के संबंध में स्वयं का विचार प्रस्तुत करते हैं जिसमें उन्होंने कई अन्य लोगों के मतों के विपरीत इस बात पर बल दिया है कि भारतीय इतिहास की शुरुआत भारत में ब्रिटिश शासन के आरम्भ के साथ नहीं हुई थी। वह लिखते हैं:

> इतिहास का मूल्य और उसके प्रति रुचि मुख्यतः इस पर निर्भर करते हैं कि किस अंश तक वर्तमान अतीत को स्पष्ट करता है। भारतीय इतिहास पर एक नई किताब को एक नवीन भावना के साथ लिखा जाना चाहिए क्योंकि इसे एक नए तरह के पाठक वर्ग को संबोधित करके लिखा जा रहा है। इतना तो निश्चित है कि भारत का इतिहास प्लासी के युद्ध के साथ आरम्भ नहीं होता है, जैसा कि कुछ लोगों का मानना है कि इसका आरंभ वहाँ से होना चाहिए, और यह कि भारत के प्राचीन इतिहास का परिपक्व ज्ञान हमेशा आधुनिक भारत की कई समस्याओं को सुलझाने के प्रयासों में एक मूल्यवान सहायक तत्व होगा।
>
> **सी. एच. फ़िलिप्स (संपा.) में उद्धृत ए. एल. बाशम, 1961: 267**

अपने पेशेवर दृष्टिकोण के कारण स्मिथ के इतिहास ने कई औपनिवेशिक इतिहासकारों के लेखों में पाए जाने वाले सही और ग़लत के निर्धारण से स्वयं को दूर रखा। इसके अतिरिक्त उन्होंने मुस्लिम आक्रमण से पूर्व भारत के राजनीतिक इतिहास का एक सुसंगत वृत्तांत प्रस्तुत किया। उन्होंने 'प्राचीन भारत की कथा को एक सुव्यवस्थित आख्यान के रूप में और ''बिना पक्षपात के'' प्रस्तुत करने का दावा किया' (उपाध्याय में उद्धृत, 2016: 444)। यद्यपि वे कला, साहित्य, संस्कृति और सैन्य विषयों में यूनानी उपलब्धियों के प्रशंसक थे, उन्होंने भारतीय राजाओं, जैसे चंद्रगुप्त मौर्य व अशोक (तीसरी एवं चौथी शताब्दी बी सी ई), गुप्त सम्राटों (चौथी-पाँचवीं शताब्दी सी ई) तथा हर्ष (7वीं शताब्दी सी ई) की भी अत्यधिक प्रशंसा की है। उन्होंने लिखा है कि इन भारतीय राजाओं के शासन की तुलना यूरोप के श्रेष्ठ शासकों के साथ की जा सकती है।

हालांकि उनका विचार था कि हर्ष की मृत्यु के बाद विध्वंसकारी शक्तियाँ कार्य करने लगीं जिसका परिणाम भारतीय राजव्यवस्था के विघटन में निकला। बड़ी संख्या में छोटे-छोटे राज्यों का उदय हुआ जो निरंतर परस्पर युद्धरत रहते थे। इससे इस देश के संसाधनों का ह्रास हुआ। यह अराजक स्थिति कई सदियों तक जारी रही और इसने भारतीय राज्यों को इतना कमज़ोर बना दिया कि वे अरबों, तुर्कों और अफ़ग़ानों के आक्रमणों का प्रतिरोध नहीं कर सके। उनका तर्क था कि केवल केंद्रीय प्रशासन के कुछ संक्षिप्त कालों को छोड़कर भारतीय राजव्यवस्था और समाज की सामान्य प्रवृत्ति विघटन की रही है। उनके अनुसार:

> हर्ष की मृत्यु ने उन विघटन के बंधनों को ढीला कर दिया था जिन्होंने विघटनकारी शक्तियों को नियंत्रण में रखा था जो भारत में हमेशा विघटन का कार्य करने को तैयार रहती हैं और उनको अपना स्वाभाविक परिणाम पैदा करने का अवसर दिया। छोटे राज्य जिनकी सीमाएँ हमेशा बदलती रहती थीं और जो कभी न ख़त्म होने वाले युद्धों में लगे रहते थे। ऐसा था भारत जब चौथी शताब्दी बी सी ई में यूरोपीय पर्यवेक्षकों ने इसे पहली बार देखा था और ऐसा ही हमेशा से रहा है, केवल तुलनात्मक रूप से उन संक्षिप्त कालों को छोड़कर जिनमें एक प्रबल केंद्रीय सरकार ने राजव्यवस्था के इन परस्पर प्रतिकर्षी अणुओं को अपनी गति पर लग़ाम लगाने और एक श्रेष्ठतर नियंत्रण शक्ति के अधीन स्वयं को समर्पित करने को मजबूर किया।
>
> **सी. एच. फ़िलिप्स (संपा.) में उद्धृत ए. एल. बाशम, 1961: 271**

इस प्रकार उनके अनुसार उदारतापूर्ण निरंकुशतावाद के रूप में केंद्रीय सत्ता को भारत में मौजूद स्वाभाविक विखंडन की प्रवृत्ति को नियंत्रित करने के लिए आरोपित करना ज़रूरी था। उनके अनुसार, 'केवल सर्वसत्तावादी सरकार को छोड़कर ... किसी भी प्रकार की सरकार भारतीय परिस्थितियों के लिए उचित नहीं थी'। इस प्रकार एकता और विधि के शासन को बनाए रखने और भारतीय लोगों को 'समाज की घृणित अवस्था' से बचाने के लिए ब्रिटिश शासन की आवश्यकता थी (उपाध्याय, 2016: 444)। उनका दृढ़ कथन था कि भारत का उनका इतिहास 'पाठक को यह अनुभव कराएगा कि भारत हमेशा से किस प्रकार रहा है जब यह किसी सर्वोच्च सत्ता से मुक्त रहा है और यह पुनः किस प्रकार का होगा यदि उदारतापूर्ण निरंकुशतावाद, जिसने इसे अभी अपनी सशक्त पकड़ में रखा है, इसका हाथ छोड़ दे तो' (सी. एच. फ़िलिप्स (संपा.) में उद्धृत ए. एल. बाशम, 1961: 271)।

बोध प्रश्न-2

1) माउंटस्टुअर्ट एल्फ़िन्स्टन और इलियट व डाउसन के विचारों व मतों के बीच समानताओं और विभिन्नताओं पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

2) विंसेंट स्मिथ के इतिहास लेखन पर एक संक्षिप्त लेख लिखिए।

.....

.....

.....

17.4 सारांश

औपनिवेशिक इतिहासलेखन उन औपनिवेशिक प्रशासकों और विद्वानों द्वारा क्रमिक रूप से विकसित हुआ था जो औपनिवेशिक शासन की निरंतरता की आकांक्षा रखते थे। उनका इतिहास लेखन भारत को जानने, भारतीय इतिहास को यूरोपीय रूपों तथा शैलियों में ढालने तथा बौद्धिक प्रभुत्व क़ायम करने का एक प्रयास था। विभिन्न औपनिवेशिक इतिहासकारों के बीच कई प्रकार की भिन्नताएँ भी थीं। लेकिन, वे सभी आधुनिक पश्चिमी सभ्यता की श्रेष्ठता के प्रति आश्वस्त थे और सभी यह इच्छा रखते थे कि भारत में ब्रिटिश शासन सरलता से चलता रहे। दो शताब्दियों के बीच – मध्य 18वीं शताब्दी से 20वीं शताब्दी के मध्य तक – लिखे गए ये औपनिवेशिक इतिहास भारत में औपनिवेशिक शासन को विचारधारात्मक वैधता प्रदान करते थे।

17.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) देखें भाग 17.2

2) देखें भाग 17.3

बोध प्रश्न-2

1) देखें उप-भाग 17.3.2 और 17.3.3

2) देखें उप-भाग 17.3.4

17.6 संदर्भ ग्रंथ

गॉटलोब, माइकल, (संपा.) (2003) *हिस्टौरिकल थिंकिंग इन साउथ एशियाः अ हैंडबुक ऑफ़ सोर्सेज़ फ़्रॉम कलोनीयल टाइम्ज़ टू द प्रैज़ेंट* (नई दिल्लीः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

मित्तल, एस. सी., (1995) *इंडिया डिस्टॉर्टेडः अ स्टडी ऑफ़ ब्रिटिश हिस्टॉरीयंज़ ऑन इंडिया,* भाग 1 (नई दिल्ली : एम. डी. पब्लिकेशन).

फ़िलिप्स, सी. एच., (1961) *हिस्टॉरियंस ऑफ़ इंडिया, पाकिस्तान एंड सीलोन* (लंदन और न्यूयॉर्कः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

उपाध्याय, शशि भूषण, (2016) *हिस्टॉरीओग्रफ़ी इन द मॉडर्न वर्ल्डः वेस्टर्न एंड इंडियन पर्सपेक्टिज़* (नई दिल्लीः ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस).

वाही, तृप्ता, (1990) 'हेनरी मेयर्स इलियटः अ रिप्रेज़ल', *जर्नल ऑफ़ द रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑफ़ ब्रिटेन एंड आयरलैंड,* 1: 64-90.

17.7 शैक्षणिक वीडियो

राइटिंग हिस्ट्री इन कलोनियल टाइम्स
https://www.youtube.com/watch?v=vMzMoG96YlQ